श्री शंकर शिक्षायतन

वैदिक शोध संस्थान

गीतानामरहस्य-गीताशास्त्ररहस्यविमर्श

प्रतिवेदन

श्रीशंकर शिक्षायतन, नई दिल्ली द्वारा वेदवाचस्पति पं. मोतीलाल शास्त्री के विज्ञानभाष्य को आधार बनाकर श्रीमद्भगवद्गीता पर इस वर्ष एक व्याख्यान शृंखला का प्रारम्भ किया गया है। इस शृंखला के अन्तर्गत दिनांक ३० जनवरी २०२२ को **गीतानामरहस्य-गीताशास्त्ररहस्यविमर्श** विषयक एक ऑनलाईन व्याख्यान का समायोजन किया गया।

प्रथम वक्ता के रूप में विषय को उद्घाटित करते हुए प्रो. मीरा द्विवेदी, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली ने पं. मोतीलाल शास्त्री प्रणीत 'गीतानामरहस्य' नामक ग्रन्थ के आधार पर भगवद्गीता में प्रयुक्त नामों के रहस्य पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि इस ग्रन्थ में तीन मुख्यविषय हैं- भगवत्-शब्दरहस्य, गीता शब्द रहस्य एवं उपनिषद्-रहस्य के रूप में स्थापना। भगवान् शब्द में प्रयुक्त 'भग' शब्द के छः अर्थ हैं- ऐश्वर्यशक्ति, धर्मशक्ति, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य।

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः।
ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरणा ॥

\- गीतानामरहस्य, पृ. ४

इस प्रकार इन छः वैशिष्ट्य को ही 'भ' कहा जाता है। जो तत्त्व सूर्य की तरह भासता रहता है अर्थात् प्रकाशित होता रहता है। वही तत्त्व 'भम्' कहलाता है। 'भासते इति भम्'। अथवा जिसके आ जाने से मनुष्य प्रकाश युक्त हो जाता है। जो तत्त्व प्रविष्ट होकर मनुष्य को तेजस्वी बना देता है, वही 'भम्' कहलाता है। **येन असौ मनुष्यो भाति।** अर्थात् जिसके माध्यम से यह 'भ' प्राप्त होता है। जो 'भ' प्राप्ति के साधक हैं, उसे भग कहते हैं। येन भं गम्यते। उपर्युक्त ऐश्वर्य आदि के द्वारा 'भ' का उदय होता है। जिस प्रकार धनवान्, ज्ञानवान् शब्द बनता है उसी तरह भगवान् शब्द भी बना है। भगः अस्य अस्ति ।

ये छः शक्ति सामान्य मनुष्य में भी न्यून और अधिक के आधार पर रह सकता है। व्यास, कपिल, कणाद और पराशर आदि ऋषियों में भी भग होने से वे सभी भगवान् कहलाते हैं परन्तु भगवान् श्रीकृष्ण का अच्युत होना इन ऋषियों से विशिष्ट करता है। पं. शास्त्री जी कहते हैं कि जो अच्युत होता है वही पूर्ण भगवान् कहलाता है। अव्ययात्मा को जान कर और पहचान कर उसमें अपने की स्थापित करना ही अच्युतत्व कहलाता है। ब्रह्म के तीन भेद हैं- अव्यय, अक्षर और क्षर। क्षर को व्यक्त संसार कहा गया है। क्षर का कारण अक्षरतत्त्व है और इन दोनों से विशिष्ट अव्यय तत्त्व है। इसी अव्ययात्मा से श्रीकृष्ण का संबन्ध है।

भगवद्गीता नाम के विषय में पं. शास्त्री जी का कथन है कि 'भगवतः गीता' इस समास से भगवद्गीता शब्द सिद्ध होता है। इस का अर्थ है भगवान् की गीता। यहाँ गीता संज्ञा शब्द है। 'भगवता गीता' इस का अर्थ है भगवान् के द्वारा गायी गयी। यहाँ गीता क्रियाशब्द है। यहाँ यह प्रश्न मन में आता है कि भगवान् ने क्या गायी । वेद में चार तत्त्वों के आधार पर वेद का स्वरूप निर्धारित होता है। मन्त्र भाग अर्थात् संहिता, कर्मकाण्ड का प्रतिपादक ब्राह्मणग्रन्थ, उपासना का प्रतिपादक आरण्यक ग्रन्थ और ज्ञान का प्रतिपादक उपनिषद् हैं । वेद का अन्तिम भाग होने के कारण इसे ही वेदान्त कहा जाता है। आत्मतत्त्व का प्रतिपादक अव्ययात्मा है। ईश, केन, कठ आदि उपनिषदों में अव्ययात्मा का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। जबकि गीता में अव्यात्मा का स्पष्ट उल्लेख होता है।

गीता में ब्रह्म और कर्म एवं इन दोनों का उभयरूप प्राप्त होता है। अव्यय, अक्षर और क्षर ये तीन ब्रह्म हैं। निवृत्ति, प्रवृत्ति और उपासना ये तीन कर्म हैं। निवृत्ति ज्ञानयोग है, प्रवृत्ति कर्मयोग है और उपासना उभयविधकर्म है । ब्रह्म और कर्म की समष्टि ही आत्मा है। आत्मविद्या को उपनिषद् कहते हैं। गीता इसी आत्मविद्या का निरूपण करती है। गीता दो प्रकार की है। श्रौती एवं स्मार्ती। दृष्टि, श्रुति, स्मृति और निबन्ध इन चार प्रमाणों के आधार पर ही आत्मसाक्षात्कार संभव होता है। उपनिषद् श्रुति है। भगवान् श्रीकृष्ण ने उसी श्रुति को स्मृति के रूप में उसे गीता में संस्थापित किया है।

द्वितीय वक्ता डॉ. दयाल सिंह पंवार, व्याकरण विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली ने पं.मोतीलाल शास्त्री प्रणीत 'गीताशास्त्ररहस्य' नामक ग्रन्थ को आधार बनाकर व्याख्यान दिया। उन्होंने कहा कि गीता में १८ अध्याय हैं। १ से ६ अध्याय में कर्मयोग का, ७-१२ में भक्तियोग का एवं १३-१८ अध्याय में ज्ञानयोग का वर्णन प्राप्त होता है।

इस गीता में चार विद्याएँ हैं- राजर्षिविद्या, सिद्धविद्या, राजविद्या और आर्षविद्या। १ से ६ अध्याय में राजर्षिविद्या का, ७ से ८ अध्याय में सिद्धविद्या का, ९ से १२ अध्याय में राजविद्या एवं १३ से १८ अध्याय में आर्षविद्या का निरूपण किया गया है। राजर्षिविद्या में ८ उपनिषद्, सिद्धविद्या में २ उपनिषद्, राजविद्या में ३ उपनिषद् और आर्षविद्या में ५ उपनिषद् हैं। गीता के प्रारंभिक भाग एवं उपसंहारभाग को मिलाकर २० उपनिषद् हो जाते हैं। इस क्रम में उन्होंने कहा कि इसमें षोडशी प्रजापति का भी निदर्शन मिलता है।

आनन्द, विज्ञान, मन, प्राण और वाक् ये पाँच अव्यय की कला हैं। ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, अग्नि और सोम ये पाँच अक्षर की कला हैं । प्राण, आप, वाक्, अन्नाद और अन्न ये पाँच क्षर की कला हैं। सोलहवां तत्त्व परात्पर है। इसी षोडशी को आत्मा कहा गया है । अत एव शतपथब्राह्मण में इस सम्पूर्ण सृष्टि को षोडश कह कर निर्देश किया गया है-

'षोडशकलं वा इदं सर्वम् ।', शतपथब्राह्मण १३.२.२.१३

राजर्षिविद्या- इसी का दूसरा नाम भगवद्विद्या भी है। पं. शास्त्री जी के अनुसार गीता का प्रधान विषय अव्यय ही है। इसके प्रतिपादक भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं हैं। अत एव गीता में वे कहते है कि मैं ही अव्यय को बतलाने वाला हूँ। प्रोक्तवानहमव्ययम् (गीता ४.१) यह राजर्षियोग बुद्धियोग और कर्मयोग से भी प्राचीन् है। परम्परा से प्राप्त यह राजर्षिविद्या है-

एवं परम्परा प्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः । (गीता ४.२)

राजविद्या-इस में ज्ञान-विज्ञान ईश्वरानुगत रहता है। अव्यय, अक्षर, आत्मक्षर, विकारक्षर, यज्ञक्षर इन पच्चीस तत्त्वों की समष्टि को ईश्वर कहते हैं। अपञ्चीकृत प्राण, आपः, वाक्, अन्नाद और अन्न ये पाँच विकारक्षर हैं। इन पाँचों तत्त्वों में सर्वहुत यज्ञ द्वारा जब आहुत हो जाते हैं तो उससे स्वयम्भू, परमेष्ठी, सूर्य, चन्द्र और पृथिवी ये पाँच यज्ञक्षर उत्पन्न होते हैं । इन्हीं का दूसरा नाम

विश्वसृट् है। अपञ्चीकृत विकारक्षर और अक्षर तत्त्व जब पञ्चीकृत होता है तो उसी को आत्मक्षर भी कहते हैं। इन पच्चीस तत्त्वों के विषय में श्रुति कहती है-

यस्मिन् पञ्च पञ्चजना आकाशश्च प्रतिष्ठितः ।, बृहदारण्यकोपनिषद् ४.४.१७

ब्रह्म नाम रूपमन्नं च जायते।, मुण्डकोपनिषद् १.१.९

इस प्रकार अव्यय, अक्षर और क्षर की समष्टि ही राजविद्या है।

सिद्धविद्या- अव्यय, अक्षर, क्षर को आत्मा कहा जाता है। इन तीनों में शुद्ध अव्यय के ज्ञान-विज्ञान का आश्रय लेना सिद्धविद्या है। सिद्धपुरुषों का जो ज्ञान एवं विज्ञान है, वह शुद्ध अव्यय की दृष्टि से है। अव्यय, अक्षर और क्षर इन तीनों में से अव्यय को आधार बना कर जो ज्ञान-विज्ञान का विचार किया जाता है, वह सिद्धविद्या है।

आर्षविद्या- गीता में 'ज्ञानयोगेन सांख्यानाम्' (गीता ३.३) संन्यास का प्रतिपादन किया गया है। फिर कर्म के लिए 'कर्मयोगेन योगिनाम्' (गीता ३.३) का प्रतिपादन किया गया है। यहाँ ज्ञानयोग और कर्मयोग जब तक बुद्धियोग से सम्बद्ध नहीं होता है, तब तक उन उन दोनों योगों का कोई महत्त्व नहीं होता है। अत एव भगवान् ने इन दोनों योगों में कर्मयोग को विशेषस्थान दिया है-

तयोस्तु कर्मसंन्यासात् कर्मयोगोविशिष्यते। (गीता ३.५)

पं. शास्त्री के अनुसार आर्षविद्या का प्रधान प्रतिपाद्य बुद्धियोगमय संन्यास ही है तथापि इस संन्यास का रहस्य तब तक नहीं जाना जा सकता है, जब तक प्रकृति-पुरुष, क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ का तत्त्व ज्ञात न हो। इसी प्रकार सत्त्वरजादि त्रिगुणतत्त्व को भी संन्यास के लिए जानना आवश्यक है। संन्यास के सहायक इन्हीं तत्त्वों को बतलाने के लिए भगवान् ने आर्षविद्या का उपदेश दिया है।

कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए श्री शंकर शिक्षायतन के समन्वयक तथा संस्कृत एवं प्राच्यविद्या अध्ययन संस्थान, जे.एन.यू. के आचार्य प्रो. सन्तोष कुमार शुक्ल ने कहा कि गीतानामरहस्य नामक ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही कहा गया है कि महापुरुष भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा स्थापित सभी शास्त्रों में निहित अपूर्वविज्ञान वाला यह गीताशास्त्र है। जिसमें ब्रह्म एवं कर्म का स्पष्ट स्वरूप निरूपित किया गया है। इसीलिए गीता आत्मशास्त्र और योगशास्त्र दोनों है। गीता में दोनों धर्मों का समावेश है । अत एव इसे भगवद्गीतोपनिषद् कहते हैं।

इन्होंने बतलाया कि पं. शास्त्री जी ने भगवान् श्रीकृष्ण को भगवान् स्वीकार करने के लिए दो तत्त्वों को मुख्य रूप से प्रतिपादित किया है। वे हैं भगलक्षण एवं अच्युतलक्षण। भग सामान्य मनुष्य में भी थोड़ा बहुत हो सकता है। परन्तु अच्युत होना मनुष्य के लिए संभव नहीं है। इस ग्रन्थ में उनके लिए पुरुषोत्तम, दिव्यभाव और परमाराध्य ये तीन विशेषण शब्द प्रयुक्त हुए हैं। क्षर, अक्षर और अव्यय से जो विशिष्ट होता है वह पुरुषोत्तम कहलाता है। यही इनका दिव्य भाव है। इसी के कारण ये संपूर्ण संसार में परम आराध्य के रूप में विख्यात हैं। अणिमा आदि योग का ज्ञाता भगवान् श्रीकृष्ण हैं। इसीलिए उनके नाम के साथ योगेश्वर कहा जाता है। इस प्रकार इस लघुग्रन्थ में अनेक विषयों का तात्त्विक विश्लेषण किया गया है।

कार्यक्रम का शुभारम्भ श्री वेङ्कटेश वेद विश्वविद्यालय, तिरुपति के वेदाचार्य डॉ. पूरण चन्द्र जोशी के वैदिक मङ्गलाचरण से एवं समापन शान्तिपाठ से हुआ। कार्यक्रम का संचालन श्रीशंकर शिक्षातन वैदिक शोध संस्थान के वरिष्ठ शोध अध्येता डॉ. लक्ष्मी कान्त विमल एवं धन्यवाद ज्ञापन डॉ.मणि शंकर द्विवेदी ने किया। गूगलमीट के माध्यम से समायोजित इस कार्यक्रम में देश के विविध विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विविध शैक्षणिक संस्थानों से लगभग १६५ प्रतिभागियों ने सम्मिलित होकर इसे सफल बनाया।